भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका
वर्ष 10 अंक 2 दिसम्बर 2002 पृ. 151-158

हिमालय की वनौषधियाँ एवं अमृत बूटियाँ

शिव मोहन सिंह एवं हरिकेश बहादुर सिंह
राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, 2 राणाप्रताप मार्ग, लखनऊ-226001

सारांशः हिमालय की उत्पत्ति अतीत के टिथेस-समुद्र से लगभग 6.3 करोड़ वर्ष पूर्व टरशियरी काल में हुई थी तथा देवलोक हिमालय में मानव का आगमन "मायो-प्लीयोसीन" काल में हुआ था। आदिकाल से ही मानव अपने को हृष्ट-पुष्ट रखने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहा है। इस प्रयास में हमारे पूर्वज मनीषियों ने आस-पास पायी जाने वाली वनस्पतियों एवं जड़ी-बूटियों से ही रोगों के उपचार एवं स्वस्थ रहने की प्रक्रिया विकसित की है। वर्तमान अध्ययन में हिमालय की वनौषधियों एवं अमृत बूटियों की जैव विविधता, जैवभौगोलिक प्रान्तियता, स्थानिक, संकटापन्न एवं लुप्तप्राय तथा कुछ विशिष्ट औषधियों के विवरण पर प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना

पृथ्वी पर मानव के विकास के साथ - साथ रोगों के इलाज में पेड़-पौधों का विशेष महत्व रहा है। जड़ी-बूटियों से इलाज की विधि को मध्य एवं दक्षिण एशिया, उत्तरी अफ्रीका, चीन तथा भूमध्यसागर से घिरे देशों में अपनाया गया है। भारत में पौधों के औषधीय महत्व का ज्ञान सर्वप्रथम ऋग्वेद (4500 - 1600 ईसा पूर्व) के श्लोकों से प्राप्त होता है। चरक संहिता (1000 - 800 ईसा पूर्व और) सुश्रुत (800 - 700 ईसा पूर्व) में हिमालय को औषधीय पौधों का सर्वोत्तम आवास माना गया है। हिमालय को औषधीय पौधों के खजाने के रूप में जाना जाता है। भारतीय हिमालय क्षेत्र $27^0, 50' - 37^0 06'$ दक्षिण और $72^0, 30' - 97^0 25'$ पूर्व तक फैला हुआ है। हिमालय का विस्तार पश्चिम से लेकर पूरब में असम तक 2400 km है। दक्षिण से उत्तर की ओर यह 400 km चौड़ा है। विशाल हिमालय को मुख्यतः तीन हिस्सों में बांटा गया है यथा- शिवालिक (5000 फीट), लघु हिमालय (5000 से 10,000 फीट), वृहद् हिमालय (10,000 फीट से ऊपर)। रोडगरस एवं पवार[1] के अनुसार हिमालय के अन्तर्गत ट्रान्स का भाग, उत्तर पश्चिम हिमालय (जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश), पश्चिमी हिमालय (कुमायूं एवं गढ़वाल), मध्य हिमालय (सिक्किम, दार्जिलिंग) तथा पूर्वी हिमालय (अरूणाचल प्रदेश) मुख्य रूप से आते हैं। सिंह एवं सिंह[2] का मानना है कि हिमालय की विशिष्ट जलवायु होने के कारण अनेक तरह के पादप एवं जन्तु आवास (habitat) होते हैं तथा यहाँ पर 21 तरह के जंगल पाये जाते हैं।

एनोनिमस[3] के अनुसार 51 करोड़ से ज्यादा लोग भारतीय हिमालयी क्षेत्र में निवास करते हैं। इनमें अधिकांश गांव में रहते हैं जो विभिन्न संस्कृतियों एवं समुदाय के अन्तर्गत आते हैं। जनजातियों (tribes) के अन्तर्गत गद्दी (gaddi) (ट्रान्सनॉर्थ-वेस्टर्न हिमालय), भोटिया, राजीस (rajees), थारूस, बोक्सास (पश्चिमी हिमालय), भूटिया, (bhutias), लेपचा एवं चकमा, नागा (पूर्वी हिमालय) को अच्छी तरह से जाना जाता है। सामन्त एवं धर[4] का मानना है कि भारतीय हिमालयी क्षेत्र में समृद्ध पादप विविधता का इस्तेमाल विभिन्न समुदायों द्वारा अनेक उद्देश्यों जैसे - भोजन, औषधि, चारा, ईंधन, कृषि-औजार, धार्मिक तथा दूसरे अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। अधिकांश औषधीय पौधों को औषधि एवं फार्मास्यूटिकल उद्योग हेतु वनों से प्राप्त किया गया है। इसके कारण अत्यधिक व्यापारिक महत्व की वनस्पति जातियों का अस्तित्व प्रभावित हुआ है। प्राकृतिक चिकित्सा की विश्वस्तर पर बढ़ती मांग के कारण औषधीय पौधों पर काफी दबाव बना हुआ है।

धवन[5] का मानना है कि भारतीय हिमालयी क्षेत्र की वनस्पतियां पर्यावरण दबाव (environmental stress) का सामना करने के कारण अनोखे जैव रसायनों का उत्पादन करती हैं जो अनेक रूप से लाभकारी हैं। हिमालय की अधिकांश पादप जातियों को आयुर्वेदिक, यूनानी, परम्परागत, औषधि प्रणाली तथा फार्मास्यूटिकल उद्योगों में उपयोग किया जाता है।

जैव विविधता

जैव विविधता के दृष्टिकोण से भारत विश्व के 12 मेगाडायवर्सिटी केन्द्रों में से एक है। यहाँ लगभग 47000 प्रकार की वनस्पतियां पायी जाती हैं। जैव विविधता की दृष्टि से समृद्ध एवं प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर हिमालयी क्षेत्रों में रहने वाले मानव कुटुम्ब की अर्थव्यवस्था में औषधीय पौधों की अहम् भूमिका है। भेषज कृषि निदेशालय सहित अन्य सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थायें इस क्षेत्र की वनौषधियों एवं अमृत बूटियों पर अध्ययनरत हैं, परन्तु अभी तक इनके संवर्धन व संरक्षण हेतु कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया है। अवैध व्यापार एवं अवैज्ञानिक दोहन ने बची खुची वनस्पतियों की अस्मिता, वितरण, आवासीय स्थल, सहवासी पौधे, विविधता व जीवनचक्र जैसे जटिल वैज्ञानिक रहस्यों पर भी प्रश्न चिन्ह लगा दिया है।

सिंह एवं हजरा[6] के अनुसार भारतीय हिमालय क्षेत्र में 8,000 जातियां एन्जियोस्पर्म (40% स्थानिक), 44 जातियां जिम्नोस्पर्म (15.91% स्थानिक), 600 जातियां टेरिडोफॉइट (25% स्थानिक), 1737 जातियां ब्रायोफॉइट (32.53%), 1159 जातियां लाइकेन (11.22% स्थानिक) तथा 6,900 जातियां कवक (27.39% स्थानिक) पायी जाती हैं। चटर्जी[7], सामन्त एवं धर[4] के अनुसार पौधों में विविधता दूसरे जैव भौगोलिक क्षेत्र की जातियों के पाये जाने के कारण होती है। इन क्षेत्रों में इटानों-ट्यूटेनियम, मेडीटिरेनियन, इन्डो-चाइनीज, इण्डियन, मलेशियन, इस्टर्न एशियाटिक, सरकमबोरियल, आस्ट्रेलियन, आमेजोनियन, ब्राजीलियन, वेस्ट इंडियन, नार्थ अमेरिकन तथा अन्य क्षेत्रों की वनस्पतियों के पाये जाने के कारण है।

जैन[8] ने बताया कि भारत में 2500 पादप जातियों का इथनोबाटेनिकल उपयोग है। सामन्त, धर एवं पालनी[9] ने हिमालय क्षेत्र में पायी जाने वाली 1748 वनस्पति जातियों के औषधीय महत्व के बारे में जानकारी दी। हिमालय की वनस्पतियों के तीन वर्गीकृत समूह (taxonomic group) एन्जियोस्पर्म (191 कुल, 878 वंश और 1685 जातियां), जिम्नोस्पर्म (4 कुल, 6 वंश तथा 12 जातियां) और टेरिडोफाइटा समूह में (28 कुल, 31 वंश तथा 51 जातियां) पायी जाती हैं। सम्पूर्ण पौधों में जातिगत समृद्धता शाक में अधिक (1020 जातियां), वृक्ष (339 जातियां), झाड़ी (338 जातियां) और टेरिडोफॉइट समूह (51 जातियां) में कम पायी जाती है। कुलों में जातिगत समृद्धता को ध्यान में रखा जाय तो एस्टरेसी कुल (129 जातियां) सर्वोपरि है। तत्पश्चात् फैबेसी (107 जातियां) लैमिएसी (63 जातियां), रूबीएसी (55 जातियां), यूफोर्बिएसी (51 जातियां), रैननकुलेसी (48 जातियां), रोजेसी (41 जातियां), पोएसी (40 जातियां), आर्किडेसी (37 जातियां), पालीगोनेसी (32 जातियां), एवं जेन्शिएनेसी (27 जातियां) पायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त शेष कुलों में 27 जातियों से कम संख्या पायी जाती है। वंश स्तर पर *पालीगोनम* (19 जातियां), वंश के अन्तर्गत सर्वोच्च संख्या होती है। इसके बाद *यूफोर्बिया* (16 जातियां), *पाइपर* (14 जातियां), *फाइकस* (13 जातियां) *एकोनाइटम* एवं *स्वेर्टिया* (12 जातियां), *आर्टीमीजिया* (11 जातियां), *सोलेनम, बरबेरिस, डेस्मोडियम* एवं *एलियम* (प्रत्येक में 10 जातियां), *सौसुरिया* एवं *ग्रीविया* (9 जातियां), *क्लीरोडेण्ड्रॉन, कैसिया, क्रोटेलेरिया, इंडिगोफेरा* (8 जातियां), *थैलिक्ट्रम, पोटेण्टिला, जिजिफस, प्रूनस, ब्लूमिया, आइपोमिया, डॉइऑस्कोरिया* एवं *कोइलोगॉइन* (7 जातियां), *डेल्फिनियम, रैननकुलस, रूबस, हेडियोटिस, अमरेन्थस, बौहिनिया, हाईपेरीकम, नेपेटा, लिट्सिया* (6 जातियां) एवं *पॉलीगैला, रयूमेक्स, क्लीमेटिस, रोजा, वायोला, करक्यूमा, जिंजीबर, बिगोनिया, साइप्रस, म्यूक्यूना, लीआ, लाइगोडियम, अकेसिया, सिजीजियम, हेवीनेरिया,* तथा *एडियेण्टम* (प्रत्येक की 5 जातियां) मुख्य रूप से पाये जाते हैं। इनके अलावा अन्य वंशों में पांच जातियों से कम पायी जाती हैं। जिम्नोस्पर्म एवं टेरिडोफॉइट समूह के पौधों की जातिगत समृद्धता बहुत कम है। औषधीय पौधों के विभिन्न भाग जैसे पत्तियां, जड़, पुष्प, फल, प्रकंद, कंद, पुष्प-क्रम, वायवीय भाग अथवा सम्पूर्ण पौधे को बहुत से रोगों के इलाज में प्रयोग में लाया जाता है।

औषधीय पौधों की अधिकतम विविधता (1417 जातियां) 1800 m से कम ऊंचाई तक के मण्डल में पायी जाती हैं। विभिन्न प्राकृतिक आवास और उपयुक्त जलवायु की दशा के कारण जैवीय संसाधन एवं मानव के निवास करने के कारण यहां पर विभिन्न संस्कृतियां और समुदाय पाये जाते हैं। इसी कारण यहां पर औषधीय पौधों का ज्ञान भण्डार ज्यादा है। प्रत्येक उच्चता मण्डल (altitudinal zone) में जातिगत संगठन (species composition) में विलक्षणता होती है। 1800 m की ऊंचाई से कम उच्चता मण्डल की वनस्पतियों में *एंड्रोग्रैफिस पैनिकुलेटा, अधाटोडा जिलेनिका , एकिरेन्थस ऐस्परा, मिलियूसा रॉक्सवर्गियाना, एपियम ग्रैवियोलेन्स, क्यूमिनम साइमिनम, रौवाल्फिया सर्पेंटाइना, फीनिक्स ह्यूमिलिस, आर्टीमीजिया नीलगिरिका, बैरिंग्टोनिया एक्यूटैंगुला, बौहिनिया वालाई, सीजल्पिनिया, केपेरिस जीलेनिका, टर्मिनेलिया चिबुला, टर्मिनेलिया बेलिरिका, सिट्रुलस कोलोसिन्थिस, सायथिया स्पाइनुलोसा, ग्लिसिराइजा ग्लैब्रा, म्यूक्यूना ब्रैक्टीयाटा, स्वेर्टिया अंगुस्टिफोलिया, क्रोकस सेटाइवस, साल्विया लेनेटा, ग्लोरिओसा सुपर्बा, अजाडिरेक्टा इण्डिका, सिसैम्पीलोस पेरिएरी, साइजीजियम* जाति, *बोरहाविया डिफ्यूजा, पिट्टोस्पोरम एरियोकार्पम, फाइसेलिस मिनिमा, ईगल मार्मेलॉस, एमब्लिका ऑफिसिनेलिस* पायी जाती हैं। इसके ऊपर के मण्डल में वनस्पति जातियों की सख्यां कम होने लगती है। 1801-2800 m की ऊँचाई के मण्डल में *एकोरस कैलामस, एरिसमा जैकमॉन्टाई, पैनैक्स स्यूडोजिनसेंग, एडियेण्टम वेनुस्टम, बरबेरिस लाइसियम, स्वेर्टिया चिरायता, पैरिस पॉलीफिला, पारनैसिया न्यूबीकोला, पलैन्टैगो मेजर, थैलिक्ट्रम फोलियोलोसम, जैन्थोजाइलम, एकैन्थोपोडियम, वर्जीनिया लिग्यूलेटा, वैलेरियाना वालिशाइ* एवं *टैक्सस बैकैटा* उपजाति *वालिशियाना,* मुख्य हैं। *ऐलियम कैरोलिनिया, ऐलियम ह्यूमाइल, ऐंजेलिका आरकनजिलिका, ऐंजेलका ग्लॉका, हिरेक्लियम लेनेटम, इनुला रेसीमोसा, जुरिनेला मैक्रोसिफेला, सौसुरिया* जाति, *कॉस्टस* जाति, *आर्नेबिया बेन्थमाइ, मेकोनॉप्सिस एक्यूलियेटा, मेगाकार्पा पॉलीएण्ड्रा, कोरीडेलिस गोवैनियाना, स्वेर्टिया थॉमसनाई, थाइमस लिनियेरिस, पोडोफिल्लम हेक्सेन्ड्रम, नार्डोस्टेकिस ग्रैण्डीफ्लोरा, पिक्रोराइजा कुर्रोआ, डेक्टिलोराइजा हेटजीरिया, एकोनाइटम हीटरोफिलम, रिहयम ऑस्ट्रेल, कापटिस टीटा* एवं *वायोला बाइफ्लोरा* 2801-3800 m की ऊंचाई पर पायी जाने वाली प्रतिनिधि जातियां हैं। वनस्पति जातियों की समृद्धता 3801 m से अधिक ऊंचाई पर सबसे कम पायी जाती है। इस मण्डल में कठोर जलवायु होने के कारण बिल्कुल विशिष्ट तरह (specialized) की वनस्पतियां पायी जाती हैं। इस मण्डल में जीव-स्थाई वनस्पतियों का अभाव होता है। यहां पर मौसमी वनस्पतियों का विचरण होता रहता है। इस मण्डल की विशिष्ट वनस्पति जातियों में *ऐलियम स्ट्रेचोइ, ब्यूप्लूरम लांजीकावली, कैरम कार्वी, कॉर्टिया डिप्रेसा, हिरेक्लियम वालिशाइ, ल्यूरोस्पर्मम कैण्डोलाई, डोरोनिकम रॉयलाई, क्रीमैन्थोडियम डिकेस्नी, सौसुरिया ब्रैक्टियेटा, सौसुरिया ग्रैमनीफोलिया,*

सौसुरिया ओबवेलाटा, सौसुरिया सिमसोनियाना, सौसुरिया गॉसीपिफोरा, एफीड्रा जिरार्डिनिया, रोडोडेण्ड्रॉन ऐन्थोपोगॉन, कोर्डीलाइन मीफ्रोलिया, स्वेर्टिया पेक्टीयोलाटा, एकोनिटम लेसिनियॉटम एवं *वर्जीनिया स्ट्रेकी* प्रमुख हैं। विभिन्न उच्चतापमण्डल में कुछ औषधीय पौधे सामान्य रूप से दो मण्डल में पाये जाते हैं। इनमें से कुछ जातियों का विस्तृत वितरण एवं अधिकांश मण्डल में इसकी उपलब्धता पायी जाती है। इनमें *एकिरेन्थस एस्परा* (100-3000 m) *सायथुला टोमेण्टोसा,* (2500 m), *कैरम कार्वी* (2500-5100 m), *सेण्टेला एशियाटिका* (2100 m), *कोरिएण्ड्रम सैटाइवम* (3500 m), *यूपेटोरियम एडेनोफिल्लम* (2200 m), *एनाफेलिस ऐडेनटा* (800-3200 m), *आर्टीमीज़िया कैपिलेरिस* (1000-4300 m), *एरिजिरॉन वेलीडिवॉइडिस* (1400-4300 m), *कार्डेमीन स्कुटाटा* (1000-4000 m), *कैनाबिस सैटाइवा* (3000 m), *ड्राइमेरिया कार्डेटा* (1200-4300 m), *सिरैस्टियम सिरैस्टीवाइडिस* (150-4700 m) तथा *चीनोपोडियम एल्बम* (800-4000 m) प्रमुख हैं।

भारतीय हिमालयी क्षेत्र में चार जैव भौगोलिक प्रांत (biogeographical provinces) पाए जाते हैं, जिनमें जातिगत स्तर पर विविधता पायी जाती है। उदाहरण के तौर पर "ट्रान्स नॉर्थ-वेस्ट हिमालय" में *नार्सिस टैजीटा, इनुला रेसीमोसा, एकोनाइटम फाल्कोनेरी* किस्म *लैटिफोबम), एकोनाइटम कैसमैन्थम,ब्यूनयिस पर्सिकम, आरकनजिलिका हिमालैइका, कैकरस पैबुलेरिया, लिग्यूलेरिया जैकमॉन्टियाना, सौसुरिया कॉस्टस, क्रोकस सैटाइवस* तथा *आइरिस कश्मीरियाना* मुख्य हैं। पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में *ऐंजेलिका ग्लॉका, ऐलियम स्ट्रेचाई, पिट्टोस्पोरम एरियोकार्पम, एरिसमा जैकमॉण्टाई, स्वेर्टिया सिलियेटा, डिडमोकार्पस पेडीसिलेटा, एकोनाइटम* जाति, *पिक्रोराइजा कर्वा, पोडोफिलम हेक्सेंड्रम, टैक्सस बैकेटा,* उपजाति *वालिशियाना* प्रमुख हैं। मध्य हिमालय के क्षेत्र में *पैनक्स स्यूडोजिनसेंग, ऐंजेलिका न्यूबीसेना, कोडोनॉपिसस एफिनिस, स्वेर्टिया चिरायता, एकोनाइटम डीनोराइजम* मुख्य हैं। पूर्वी हिमालय के क्षेत्र में *कापटिस टीटा, मेसुआ फीरा, क्राइनम प्राटेन्सी, पोथास कैथार्टिका, स्वेर्टिया डिलेटाटा, बिगोनिया रूब्रोवीनिया, होया ग्लोबुलोसा* इत्यादि हैं।

एन्डेमिक जातियां (endemic species) अत्यधिक छोटे क्षेत्र में सीमित होती हैं। भारतीय हिमालयी क्षेत्र में 62 औषधीय जातियों को एन्डमिक समूह में रखा गया है। इनमें *ऐलियम स्ट्रैचाई, पेंगिया निटीडा, ऐंजेलिका ग्लॉका, ऐंजेलिका नुबिगेना, फ्लूरोस्पर्मम कैण्डोलाई, जलाका बेकारी, इनुला रेसीमोसा, बेरबेरिस एफिनिस, बेरबेरिस स्यूडोअम्बीलाटा, कोरीडेलिस वैजिनन, कोईलोगाइन पेक्टाटा, आइरिस कश्मीरियाना, एकोनाइटम फाल्कोनेरी, एकोनाइटम फेरॉक्स, एकोनाइटम लेवी, कापटिस टीटा* तथा *डेल्फीनियम कश्मीरियानम* प्रमुख हैं।

अत्यधिक उपयोग के कारण संकटापन्न (critical) एवं लुप्तप्राय (endangered) औषधीय पौधों में *डेक्टिड्लोराइजा हेटजीरिया, मिकैनॉपिसस एक्यूलियेटा, पोडोफिलम हेक्सेण्ड्रम, मेगाकार्पेइआ पॉलीएन्ड्रा, एकोनाइटम* जाति, *रीअम* जाति, *सॉसुरिया* जाति, *स्वेर्टिया चिरायता, डायडमोकार्पस पेडीसिलेटा, ऐंजलिका ग्लॉका, फ्लूरोस्पर्मम* जाति, *इफेड्रा जिरार्डियाना, एन्जियोपटेरिस इवेक्टा, टैक्सस बैकेटा* उपजाति *वालिशियाना, महोनिया नेपालेंसिस, बरबेरिस* जाति, *ऐलियम* जाति, *जुरीनेला मैक्रोसिफेला, बिगोनिया जोसीफाई, विगोनिया रूब्रोवीनिया, कोरिलस जैकमॉन्टाई, कोडोनॉपिसस ओवाटा, ब्यूटिया माइनर, जेन्टीयाना कुर्रोआ, साल्विया लेनेटा, फ्राटीलेरिया रायलाई, जिम्नाडीनिया आर्किडिस, पेरिस पॉलीफिला, कोरीडैलिस मेफोलिया, कोरीडेलिस बैजिनस* इत्यादि प्रमुख हैं।

एकिलिया मिलीफोलियम लिनिअस (स्थानीय नामः गंदना; कुलः एस्टेरेसी)— यह 50 cm ऊंचा बहुवर्षीय शाक है, इसकी पत्तियां आयतरूप या भालाकार, 2-10 cm लम्बी, एकान्तर क्रम में लगी होती है। पुष्प मुण्डक में पाये जाते हैं तथा इसका रंग श्वेत या गुलाबी होता है यह पश्चिमी हिमालय में 2000 से 3000 m ऊंचाई तक पाया जाता है। पत्तियां एवं मुण्डक (पुष्प) का उपयोग यकृत की बीमारी, प्लीहा दोष के कारण होने वाले ज्वर के इलाज में इस्तेमाल होता है। इसे वातहर एवं एन्टीहिपैटोटाक्सिक औषधि के रूप में माना जाता है। एक्सपेक्टोरेन्ट (expectorant), कफ़ निस्सारक स्वेदनकारी गुण होने के कारण इस पौधे के तेल का वातहर के रूप में प्रयोग किया जाता है और जुकाम और इन्फ्लुएंजा में आराम दिलाता है। कटे घाव से रक्त को रोकने तथा घाव को भरने में प्रभावी है एकिलाइन एल्केलॉएड एक रक्त स्तंभक कारक की भाँति कार्य करता है। उद्वेष्टरोधी क्रिया फ्लेवोनॉयड द्वारा होती है। प्रदाहरोधी क्रिया एजुलीनेज (तेल) के कारण होती है। सेस्क्वीटर्पीन लैक्टोन जल में विलेय ग्लाइकोप्रोटीन में भी यह गुण होता है। वेदनाहर क्रिया यूजीनाल, मेन्थाल के कारण होती है। इस पौधे के तेल का इस्तेमाल ''एबार्टीफेसिएन्ट'' थूजीन (जैनरमदम) के कारण होता है। इस पौधे से नीले रंग का उड़ने वाला तेल प्राप्त किया जाता है, जिसमें 120 यौगिकों को पहचाना गया है इससे कैमेजुलीन, कैमेजुलीन काबॉक्सिलिक अम्ल, एकिलीसिन, एकिलीन, 8-हाइड्रॉक्सी एकिलीन, आस्ट्रीसीन, ल्युकोडिन इत्यादि प्राप्त किये गये हैं। फ्लैवेनॉयड दूसरे तरह का विशिष्ट यौगिक है यथाः एपीजीनीन, एपीजीनिन ग्लाइकोसाइड, आर्टीमेटिन, कैसटेसीन, ल्युटियोलिन, रूटिन, स्टीरॉल एवं ट्राइटर्पिनाएड रसायन में स्टिगमैस्टीरॉल, कम्पेस्टीरॉल भी प्राप्त किये गये हैं।

एकोनाइटम हीटरोफिलम वाल (स्थानीय नामः अतीस; कुलः रैननकुलेसी)— यह एक बहुवर्षीय शाकीय वनस्पति है जो कि पश्चिमी हिमालय के उप - अल्पाइन क्षेत्रों में कश्मीर से कुमाऊं एवं गढ़वाल की पर्वत श्रृखलाओं (2200 - 4000 मी.) की ऊँचाई पर पायी जाती है। इसकी जड़ पीड़ानाशक, हृदयावसाद, नाड़ी अवसाद, मधुमेह, बलवर्धक, गठिया, तंत्रिका शूल, साइटिका एवं बहुमूत्र में उपयोगी होती है। एटिसिन, एकोनिटिन से कम जहरीला होता है। एटिसिन अति रक्तचाप के लिए जिम्मेदार होता है। एटिसिन हेट्राटिसिन हिस्टीसिन हीटरोफाइलीसिन, हीटरोफिलॉइन, हीटरोफिलीडीन, एटीडीन, हिटीडीन, बेन्जोलहेटरोटीसिन, एफ-डाइहाइड्रोएटीसिन तथा हिटीसिनोन नामक रसायन पाये जाते हैं।

एकोरस कैलामस लिनिअस (स्थानीय नामः वच; कुलः एरेसी)—इसके पत्ते तलवारनुमा, धारदार तथा गाँठदार होते हैं। यह भूमिगत तने प्रकंद के द्वारा अपना फैलाव करता है। पौधे की ऊंचाई 45 - 60 cm और 2000 m की ऊंचाई पर पाया जाता है। प्रकंद उच्च रक्तचाप तथा मिर्गी की रोकथाम, श्वास कास, यकृत, गुर्दे, ऑव, दस्त, मलयस, वातत्याधिक तथा ग्रन्थि और पेट के ट्यूमर आदि में लाभकारी होता है। इसके तेल में आकुंचन गुण पाया जाता है। एसरोन का विरेचक एवं उद्वेष्टरोधी प्रभाव देखा गया है। तंत्रिका औषध विज्ञानी कार्य में अवसादक की भांति कार्य करता है। एल्फा एवं बीटा "एसॉन (1-3), कैलेमॉल कैलामीन, सायोवुनोल, इपीसायोवुनोल, तथा पेरीआइसोकैलेमेन्डियाल नामक रसायन प्राप्त हुआ है।

ऐन्जेलिका ग्लॉका (स्थानीय नामः मन्द्रायन/मन्द्रारणी; कुल एपीऐसी)—यह रोयेंरहित, चिकना 1.5 - 3.6 m ऊँचा पौधा है इसकी जड़ फूली हुई (कंदील), फूल श्वेत, पीले या हल्के रंग के होते हैं। हिमालयी क्षेत्र में 1800-3700 m की ऊंचाई पर दिखाई देता है। यह दमा, जठर शोध, सूखी खांसी, टट्टी-पेशाव रूक जाने पर उपयोगी होता है। हृदय एवं पेट दर्द निवारक तत्व पशुओं में "रिन्डर-पेरन्ट" के उपचार में लाभप्रद है। यूरोप में कफ़ निस्सारक की तरह श्वसनी बीमारियों में ठंड लग जाने पर कफ़ तथा आमाशय एवं पाचन की समस्या दूर करने में भी लाभकारी हैं। जड़ों में 0.35-1.9% वाष्पशील तेल पाया जाता है। जिसमें 80-90% मोनोटर्पिन हाइड्रोकार्बन (बीटा-फेलैक्ड्रीन 13-28% फेलैक्ड्रीन 2-14%, सेस्क्वीटर्पिन एन्गिलिक एसिड ($C_5H_{18}O_2$ Mr. 100.12) फीनॉलिक अम्ल क्लोरोजिनिक एवं कैफिक अम्ल, वसा अम्ल (पामिटिक, ओलिक तथा लिनोलिनिक), शर्करा एवं टैनिन पाया जाता है।

ऐलियम कनसैग्विनियां (स्थानीय नामः जम्बू; कुलः एलिएसी)—यह 30-40 m सेमी. ऊँचा शाकीय पौधा है जो 3500-4000 m मीटर की ऊंचाई पर हिमालयी क्षेत्रों में पाया जाता है। वात - शीत में लाभकारी एवं उच्चकोटि के सुंगधित तेल का स्रोत है।

एट्रोपा बेलाडोना लिनिअस (स्थानीय नामः डोलू; कुलः सोलनेसी)—यह चौड़े पत्तों से युक्त 60 cm सेमी. ऊँचा पौधा होता है। इसकी तासीर गर्म होती है। 1800-3600 m मीटर की ऊंचाई पर मिलता है। पीलिया रोग में लाभप्रद, चोट - मोच में उपयोगी तथा ऊन की रंगाई में भी इस्तेमाल होता है। यह एबटुसोसमोडिक कारक की भांति कार्य करता है। जैविक क्रिया : एट्रोपीन एक उद्वेष्टरोधी पदार्थ है, यह आहार नली, ब्रायलरी ट्रैक्ट, मूत्रीय,गर्भाशय एवं श्वसनी कारक मांसपेशियों में विरेचक की भांति एवं घाव के उपचार में कारगर है। यह स्रावरोधी कारक की तरह कार्य करके पसीने को रोकता है तथा लार एवं श्वसनी स्राव को भी नियमित करता है। यह हृदय को भी उत्प्रेरित करता है। इससे ट्रोपेन एल्केलायड (हायोसीन, हायोसायमीन एवं एट्रोपिन) प्राप्त किया गया हैं। इसकी पतियों से फ्लैमनोग्लैक्टोसाइडरटीन, 3-रैमनोग्लैक्टोसाइड (कैम्फरॉलकवीरसीटीन-7 मोनोग्लुकोसाइड एवं केम्फरॉल -7- मोनोग्लुकोसाइड) ग्लाइकोसाइड (स्कोपालीटीन) प्राप्त किया गया है।

एट्रोपा एक्यूमिनेटा रायल (स्थानीय नामः अन्गूर सेफा; कुलः सोलेनेसी)—यह 60 - 70 m ऊँचा बहुवर्षीय पौधा है जो कि 1800 - 3600 m तक की ऊँचाई पर कश्मीर से हिमांचल प्रदेश तक पाया जाताा है। पत्ताी का इस्तेमाल जठरांत्र संबंधी, श्वसनी, दमा, काली खाँसी, हायरमोर्टिलिटी, अति स्राव, गठिया, वातसूल इत्यादि में उपयोग किया जाता है।

कैरम कार्वी लिनिअस (स्थानीय नामः स्याहजीरा; कुल : एपीएसी/अम्बेलीफेरी)—यह द्विवर्षी या बहुवर्षी बूटी है जो 30-90 m ऊँची, जड़े मोटी कन्दिल, बहुदलीय, रेखीय खण्डों युक्त, फूल सफेद, छोटे, हिमालयी क्षेत्र (कश्मीर, कुमायँ, गढ़वाल, चम्बा) में 2700 से 3600 मीटर की ऊँचाई पर पायी जाती है। चिकित्सा में वातसारी, मतली और मरोड़ प्रवर्ती दोषों के निवारण के लिए, खाज के इलाज, साबुन में सुगंध के रूप में इसका तेल इस्तेमाल होता है। जीरे का प्रयोग मसालों में, सासेज एवं अचारों में होता है। जीरे का तेल हल्का पीला होता है इसमें "कारवोन" नामक कीटोन, डी. एल-लिमोनीन पाया जाता है।

सेण्टेला एशियाटिका (लिनिअस) अर्बन (स्थानीय नामः ब्राह्मी; कुलः एपीएसी)—शाकीय, विसर्पी पौधा है। इसकी पत्तियां वृक्क की तरह 0.5 से 1.5 cm तक लम्बी होती हैं। पौधो की लम्बाई 2 cm तथा पुष्पों का रंग सफेद या गुलाबी, छत्रक में लगे होते हैं। बीज छोटे, उपोष्ण क्षेत्रों में 1500 m तक, गन्दे जगह, हिमाचल में मण्डी, कांगड़ा, चम्बा, विलासपुर इत्यादि जगहों से प्राप्त किया गया है। सम्पूर्ण पौधे का उपयोग आयुर्वेद, यूनानी, तथा सिद्ध चिकित्सा में होता है। मानसिक रोग, कब्ज, श्वासनली सम्बन्धी रोग, रक्त शोधक, खाँसी इलाज तथा स्मरण शक्ति बढ़ाने में गुणकारी है। यह कुष्ठ, रक्ताल्पता, पीलिया, त्वचा रोग में लाभकारी होता है। इसमें ज्वरहर, गठियारोधी तथा निराविषकारी गुण होते हैं। इसमें ट्राइपीनायड, सैपोनिन, ओलिक अम्ल, बेलारिन, हाइड्रोकोटेलिन, सिटोस्टिरॉल, एशियाटिकोसाइड नामक रसायन पाये जाते हैं।

क्राइसैन्थेनम सिनरेरीफोलियम (स्थानीय नामः पाइरेथ्रम/कीट पुष्पी; कुलः अम्बेलीफेरी)—यह एक 60 cm ऊंचा, बहुवर्षीय पौधा है। इसका मूल स्थाना कीनिया है। यह 1500 से 2000 m तक की ऊंचाई वाले स्थान पर अच्छी तरह से उगता है। इसके फलों से अत्यंत प्रभावी कीटनाशक बनाये जाते हैं। इसमें पॉयरेथ्रिन, सिनरिन, पॉमीटिक, लीनोलिक अम्ल, सेस्क्वीटर्पीन एवं लैक्टोन नामक रसायन प्रमुखता से पाये जाते हैं।

डिजिटेलिस लैण्टाना (स्थानीय नामः लेण्टाना; कुलः स्क्रोफुलेरिएसी)— यह द्विवर्षीय या बहुवर्षीय पौधा है, इसको 2300-3000 m की ऊंचाई तक उगाया जा सकता है। यह उत्तरकाशी, चकराता, गढ़वाल, पिथौरागढ़ इत्यादि जगहों पर पाया जाता है। पत्तियों का उपयोग हृदय जनित रोगों में मुख्यतः हृदय उत्तेजक दवाओं तथा टानिकों में होता है।

डाइऑस्कोरिया डेल्टॉयडिया (स्थानीय नामः गेंठी; कुलः डायोस्कोरियेसी)—यह 2700 m की ऊँचाई पर उगने वाला हिमालयी वार्षिक वल्लरी है। पत्तियां अण्डाकार - भालाकार, लम्बी नुकीली और आधार की तरफ हृदयाकार होती है। पुष्प छोटे, नर एवं मादा पुष्प अलग-अलग पौधों पर पाये जाते हैं। नर पुष्प का पुष्पक्रम शूकी 7 - 35 cm. लम्बी परन्तु मादा शूकी 10 - 15 cm लम्बी होती है। संपुटिका 1.7 - 2.5 cm. और पंखयुक्त होते हैं। बीज में भी पंख पाया जाता है। इसमें पुष्प एवं फल मई - सितम्बर माह में आते हैं और इसका वितरण शीतोष्ण वन में 2000 - 3000 m के बीच पाया जाता है। हिमाचल प्रदेश में मण्डी, काँगड़ा, कुल्लु, शिमला, किन्नौर एवं लाहुल - स्पीती में पाया जाता है। कन्द से कोर्टिसोन स्टेरॉइड हार्मोन तैयार किया जाता है जो संधिवात शोथ के उपचार के काम आता है। कार्टिसोन का उपयोग चर्मरोग, नेत्र संसर्ग, रक्तरोग, संधिवात रोग में तथा कंद का इस्तेमाल रेशमी एवं ऊनी वस्त्र तथा बालों को धोने में किया जाता है। डाल्टोनिन एक स्टेराइडल ग्लाइकोसाइड है जो गर्भनिरोधक क्रिया दर्शाता है। डाल्टोनिन पौधे के प्रकंद से प्राप्त किया जाता है। इस पौधे में डायोसजेनिन एस्टीरॉयड प्रधान अवयव है जो इसके ग्लाइकोसाइड (सैपोनीन) के रुप मे पाया जाता है। इसके जल अपघटन के उपरान्त डायोसजेनिन प्राप्त होता है।

यूलोफिया कमपेस्ट्रिस (स्थानीय नामः सालम पंजा/हत्थाजड़ी; कुलः आर्किडेसी)—यह पंजे के आकार का कंद होता है। इसका फल गुलाबी रंग का होता है और 2800 - 3600 m की ऊँचाई पर पाया जाता है। इसमें शक्तिवर्द्धक तथा वीर्यवर्धक गुण होता है। यह कटे घाव से रक्त को तुरन्त बन्द करने में इस्तेमाल होता है।

हायोसायमस नाइजर लिनिअस (स्थानीय नामः खुरासानी अजवाइन; कुलः सोलेनेसी)—यह एकवर्षीय या द्विवर्षीय रोयेंदार पौधा है जो 1600 से 3000 m की ऊँचाई पर मिलता है। इसकी पत्तियों में डायोसायमीन तथा एट्रोपीन रसायन पाया जाता है, जो आँखों के उपचार में गुणकारी है। यह कृमिरोधी, अस्थमा, अवसादक एवं स्वातक गुण रखता है। यह उद्वेष्टरोधी प्रभाव रखता है। इससे जीवाणुरोधी, कवकरोधी, प्रोटोजोआरोधी, कृमिरोधी, विषरोधी, एन्टीस्पाइरोकीटल, हाइपोलाइसीमिक क्रिया का प्रभावी परिणाम नहीं मिला है। ट्रोपेन एल्केलॉएड मुख्य रूप से मिलता है। इससे हायोसायमिन, हायोसाइन, एपोहायोसीन, ट्रोपीन, बेलाडोनीन, कुसकोहाइग्रिन, एस्कार्बिक अम्ल, रुटीन और अमीनो अम्ल भी प्राप्त होता है।

मेन्था पाइपेरिटा लिनिअस संशोधित हड्स (स्थानीय नामः मेन्था; कुलः लैमिएसी)—यह एक बहुवर्षीय 30 से 450 cm ऊँचाई वाला पौधा है। इसके फूल का रंग बैंगनी होता है। दातों के पेस्ट के रूप में इस्तेमाल होता है तथा सुगन्धित चूर्ण औषधालयों में प्रयुक्त होता है।

मेन्था आर्वेन्सिस लिनिअस (स्थानीय नामः पोदीना; कुलः लैमिएसी)—यह एक 60 cm ऊँचा बहुवर्षीय पौधा है। जो 270-1500 m की ऊँचाई पर पाया जाता है। इसका सुगन्धित तेल विभिन्न औषधियों में इस्तेमाल किया जाता है। लियंग एवं फॉस्टर[10] ने जानकारी दी कि इस पौधे के रसायन मतली, सोरथ्रोट, अतिसार ठंड, सरदर्द तथा अपाचन में इस्तेमाल किये जाते है। मिन्ट के तेल में मेन्थाल, मेथनोन, आइसोमेथनोन, मेथाइल एसीटेट, मेन्थोफ्यूरान, सिनीयोल तथा पुलीगोन मुख्य रूप से पाये जाते हैं।

नार्डोस्टेकिस ग्रेण्डी द कन्दोल (स्थानीय नामः मासी; कुलः वैलेरियानेसी)—यह एक सुगंधित एवं कीटनाशक पौधा है। कोढ़ तथा पोलियो में इसकी जड़ एवं पत्तियों का इस्तेमाल किया जाता है। जड़ों का उपयोग हिस्टीरिया, स्पंदन, रजोनिवृत्ति तथा अन्य तंत्रिकातन्त्र सम्बन्धी बीमारियों के इलाज में होता है। तेल का इस्तेमाल सुगंधि के रूप में होता है और यह उपशामक प्रभाव रखता है। इसके तेल से जटामनसोन नामक एक प्रभावी कीटोनिक सेस्क्वीटर्पीन प्राप्त किया गया जिसका रिसरपाइन तथा क्लोरोप्रोमेजाइन की तरह का प्रभाव कई जन्तुओं में देखा गया है। कुत्तों में हाइपोटेन्सीव प्रभाव देखा गया है। इसमें आइसोवैलरिक अम्ल, हेक्साकोसानिल आइसोवैलरेट, हेक्साकोसानिल आर्किडेट, कैलरीन, सेस्क्वीटर्पीन कीटोन, जटामनसोन, वैलरेनोन, नारडोल, कैलेरेनोल, नार्डोस्टैकोन, एरिस्टोलीन, मैलोलिनी, इलीमोल पाए जाते हैं। इस की जड़ों से तेल प्राप्त किया गया है, जिसमें टर्पीन, बीटा यूडस्मोल, इलीमोल, एल्फा-बीटा पाइनीन, टर्पीनिक, कौमुरिन, एन्गिलीसीन, जटामनसिन, जटामनसिनोल तथा विसनाडिन नामक रसायन मुख्य रूप से पाये जाते है।

नार्डोस्टेकिस जटामाँसी द कन्दोल (स्थानीय नामः जटामाँसी; कुलः वैलेरियानेसी)—यह बहुवर्षीय शाकीय वनस्पति हैं, जिसकी ऊंचाई 10-60 cm तथा जड़ से 5-6 cm लम्बी शाखायें निकलती हैं। हिमालय के अल्पाइन क्षेत्रों मे जम्मू-कश्मीर से लेकर सिक्किम, भूटान तक करीब 3000-5000 m ऊँचाई पर पाया जाता है। पत्तियां लम्बी, स्पैचुलाकार, स्तम्भीय अवृन्त, कुछ दीर्घायत, पुष्प गुलाबी-नीले तथा सघन होते हैं। तन्त्रिका तन्त्र से सम्बन्धित व्याधियों के उपचार में इस्तेमाल किया जाता है। इसकी प्रकृति मानस दोपहर, पित्तशामक, वाततुलोभन, शूल प्रशमन, हृदयोत्तेजक, कनिसारक, वाजीकरण, कष्ठहन, संज्ञास्थायन व शोथहर है। स्मृतिह्रास, कमला, हृदय विकार, हृदय शैथिल्य, चर्मरोग, अपरमार आदि व्याधियों में लाभकारी है। स्पिकेनार्ड तेल में प्रतिअतालता सक्रियता पायी जाती है इसी कारण यह कर्ण स्फुरण चिकित्सा के लिए लाभकारी है। हृदयपेशी रोधगलन से उत्पन्न निलयी हर प्रवेग मे क्विनिडीन से अधिक प्रभावी है। जटामासोन में विषहारी गुण भी पाये जाते है। इससें स्पिकेर्नाड'' तेल प्राप्त होता है। इस तेल से एक एल्कोहल तथा आइसोवेलिरिक एस्टर तथा प्रकन्दो से एक संतृप्त द्विचक्रीय सेस्क्वीटर्पीन जटामान्सिक अम्ल कीटोन, जटामॉसोन, पृथक किए गये हैं।

पिक्रोराइजा कुर्रोआ रायल एक्स बेंथम (स्थानीय नामः कुटकी; कुलः स्क्रोफुलेरियेसी)—यह एक बहुवर्षीय रोमयुक्त, बेलनाकार गठीला शाकीय पौधा है। इसके फूल बैगनी - नीले होते हैं तथा पौधे की लम्बाई

15 cm तक होती है। यह हिमालयी क्षेत्रों में 3000-4200 m की ऊँचाई में उगता है। इस पौधे की जड़े काष्ठीय होती है। पत्ती सरल, स्पैचुलाकार और दन्तयुक्त किनारे, पुष्प शीर्षस्थ रेसीम, कैप्सूल गोल तथा खोलयुक्त पर्णवृन्त होता है। प्रकन्द एवं जड़ों का औषधीय महत्व है। यह कफ को बाहर निकालता है, तथा कब्ज, गठिया-वात, मूत्र एवं मासिक ध र्म के विकारों को दूर करता है। मलेरिया बुखार में भी गुणकारी है। यह कालिक ज्वररोधी क्षुधावर्धक, पित्त विरेचक, मूत्रल गुण होते हैं। यह विषाणुक यकृत शोध, पीलिया, क्षुधा ह्रास में इस्तेमाल होता है इसकी अल्पमात्रा कालिक ज्वररोधी पित्तविरेचक, क्षुधावर्धक तथा मृदु-विरेचक होती है। जड़ों का एल्कोहली निष्कर्ष *माइक्रोकोकस पायोजीन्स* किस्म *ऑरियस* और *एशेरिकिया कोली* के विरूद्ध सक्रिय होता है। कुटकिन (बीटा-1 वैनिलॉयल-6 सिनैमिल-क.ग्लूकोस) नामक एक ग्लूकोसाइडी तिक्त पदार्थ, कुर्रिन, कुटकिऑल, कुटकी स्टेरॉल, सेस्क्वीटर्पीन तथा पिकोलिव पाया जाता है।

पोडोफिलम हेक्सैन्ड्रम रायल (स्थानीय नामः वन ककड़ी; कुलः पोडोफिल्लेसी)—यह 35 - 60 cm ऊँचा पनीला, प्रकन्दयुक्त बहुवर्षीय, शाकीय पौधा है। इसमें 2 - 3 हस्ताकार पत्ते निकलते हैं तथा एकल पुष्प सफेद या गुलाबी और फल गोल (वेरी) सिन्दूरी रंग के अण्डाकार (2-5 - 5 cm.) होते हैं। बीज अनेक, पल्प के अन्दर ढके रहते हैं। यह 2500 - 4200 m ऊँचे हिमालयी क्षेत्रों में पाया जाता है। पुष्प एवं फल अप्रैल से सितम्बर के बीच लगते हैं तथा इस पौधे का वितरण शीतोष्ण और अल्पाइन क्षेत्रों में 2400 - 4500 m की ऊँचाई तक जंगलो में पाया जाता है। यह पौधा हिमाचल में मण्डी, कुल्लु, कांगड़ा, चम्बा, शिमला, किन्नौर, लाहुल - स्पीती में पाया जाता है। प्रकन्द (राइजोम) एवं जड़ों में पाये जाने वाले रेजिन की दस्तावर दवाओं को ज्वरनाशक, ट्यूमर, कैंसर तथा उल्टी कराने वाली अमृत बूँटी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। पोडोफिलिन रेजिन बनाने के काम आती है तथा आर्युवेद में इसे विरेचक एवं यकृती, उद्दीपक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। पोडोफिलन पित्तरेचक, रेचक, रूपान्तरक, वमनकारी एवं कड़वा टानिक है, यह एक प्रचन्ड लेकिन मंद क्रियारेचक है। यह पेट में गहरी मरोड़ पैदा करता है अतः इसका उपयोग बेलाडोना व खुरामासी अजवायन के साथ किया जाता है। कोशिकीय कार्यों में कोल्चिसीन की तरह कार्य (क्रोमोसोम को विसरित) करता है। कोशिकाओं पर विषैली क्रिया के कारण रतिरोगों के कोमल मस्सों तथा अन्य मस्सों के इलाज में इसका लेप किया जाता है। पोडोफिलिन विषैला है और त्वचा तथा श्लेश्मल झिल्ली में क्षोभ उत्पन्न करता है। अधिक मात्रा के सेवन से तीव्र वमन, विरेचन तथा मृत्यु भी हो सकती है। पोडोफिलोटाक्सिन की मात्रा जड़ों में बहुत होती है। रेजिन से अन्य अवयव क्वेर्सेटिन, कैम्पफेरॉल, ऐस्ट्रैगलिन भी प्राप्त किये गये हैं। फुजी (लम्बाई 1991) ने पोडोफिलम पेल्टेटम से वेपेसाइड औषधि प्राप्त की है।

पॉलीगोनेटम वर्टिसिलेटम (स्थानीय नामः मेदा/महामेदा; कुलः लीलिएसी)—यह एक लतानुमा 60 - 120 cm लम्बाई वाला शाकीय बहुवर्षीय पौधा हैं। *पॉलीगोनेटम वर्टिसिलीफ्लोरम* के फूल सफेद, हल्के -गुलाबी तथा *पॉलीगोनेटम सिटीफोलियम* के फूल गुलाबी बैंगनी रंग के होते हैं। यह उच्च हिमालयी क्षेत्रों में 2200- 2600 m की ऊँचाई पर पाया जाता है। पत्तियां अवृन्त, 4 - 8 के गुच्छे में, रेखीय, रेखीय-भालाकार; पुष्प हरे - सफेद, 2 - 3 पुष्प वृन्त पर लगे होते हैं और कक्षस्थ गुच्छों का निर्माण करते हैं। फल बेरी, गोलाकार, पकने पर नीले - काले रंग के होते हैं। पुष्प एवं फल मई से सितम्बर माह के बीच आते हैं। यह शीतोष्ण भागों में 2000 - 3000 m के बीच जगंलों में मिलता है। हिमांचल में मण्डी, काँगड़ा, चम्बा, शिमला, कुल्लु, किन्नौर, लाहुल - स्पीती जिलों में पाया जाता है। इसका राइजोम (प्रकन्द) आर्युवेद में अष्टवर्ण की बहुमूल्य औषधि है। बलवर्धक गुणों के कारण इसे च्यवनप्राश में इस्तेमाल किया जाता है। इसे 'मूत्रल' व हृदय को बल देने वाला माना जाता है। आर्युवेद के अनेक नियमनों में इसे टॉनिक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

रौवॉल्फिया सर्पेण्टाइना बेंथम एक्स कुर्ज (स्थानीय नामः सर्पगन्धा; कुलः एपोसाइनेसी)—यह 35-75 cm ऊंचा, सदाबहार झाड़ीनुमा पौधा है। इसकी पत्तियां 5-10 cm लम्बी तथा 2.5-5 m चौड़ी, भालाकार अथवा अधोमुख-भालाकार होती हैं। फूल 1.5 cm लाल रंग का होता है। हिमालय की तलहटी एवं पूर्वी घाटी की निचली पहाड़ियों में पाया जाता है। जड़ का इस्तेमाल सर्पदंश तथा विषैले कीट पतंगों पर उपचार हेतु किया जाता है। उच्च रक्त चाप, ज्वर तथा पेट के विकारों में भी गुणकारी होती है। इसमें रिसरपीन नामक रसायन पाया जाता है जिसका इस्तेमाल शामक औषधि एवं अतितनाव के इलाज में होता है। रिसरपीन, अजमालिसीन, सर्पाजाइन, अजमालिसिडीन और अन्य एल्केलॉएड प्राप्त किये गये हैं।

सॉसुरिया लैपा सी.बी. क्लार्क (स्थानीय नामः कुथ; कुलः एस्टेरेसी)—यह एक लम्बा, रोमयुक्त शाकीय पौधा है। पत्तियां झिल्लीनुमा, अनियमित ढंग से खाँचों में, आधार बहुत बड़ा, त्रिकोणीय, सवृन्त मुण्डक गुलाबी, कक्षस्थ अथवा शीर्षस्थ, 2-m की ऊँचाई वाला बहुवर्षीय पौधा है। इसके पत्ते बड़े होते हैं जिनके आधार पर दो पाली होती है जो पौधों के तने में लिपटी सी होती है। बीजों पर लम्बे-लम्बे बाल होते हैं। इस पौधे में फल एवं फूल जून - सितम्बर माह में आते हैं। यह हिमालय की ऊँची पहाड़ियों के क्षेत्रों में 2500-4000 m की ऊँचाई पर लाहूल-स्पीती, मण्डी, चम्बा, किन्नौर में पाया जाता है। जड़ों में प्रतिरोधी तथा निष्क्रामक तथा रोगाणुनाशक गुण पाये जाते हैं। यह दमा, खांसी, श्वासनली की सूजन, अफरा, उदरशूल तथा हृदय के कुछ रोगों में उपयोगी है। सगंध तेल उच्चकोटि की सुगंधशाला एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में उपयोगी होता है। कश्मीर में शालों एवं ऊनी वस्त्रों को कीटों से बचाने के लिए कीटनाशक के रूप में भी प्रयुक्त होती है। यह खांसी एवं दमा में भी प्रयुक्त होता है। जड़ का संगध तेल और एल्केलायड युक्त एल्कोहलीय निष्कर्ष श्वसन, दमा के उपचार में विशेष रूप से बैगोटोनी प्रकार में अत्यधिक उपयोगी पाया गया है। चूर्णिल औषधि को सिगरेट की तरह पीने से प्रमस्तिष्क

तंत्रिका तन्त्र में सुस्पष्ट अवसाद उत्पन्न होता है इसी कारण इसको अफीम के प्रतिस्थापी के रूप में धूम्रपान में प्रयोग किया जाता है। लाहोल क्षेत्र में, जाड़ो में पौधे के सूखे तने को चारे के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसकी गंध जानवर की चर्बी जैसी होती है तथा तेल की अल्पमात्रा विभिन्न प्रकार के उत्तेजक, काष्ठिल गंध प्रेरित करती है। कोस्टस तेल में विसरण शक्ति उत्पन्न करने की विलक्षण क्षमता होती है। कुथ की जड़ के सगंध तेल में विशेष रूप से स्ट्रेप्टोकॉकस और स्टेफिलोकॉकस के प्रति प्रबल प्रतिरोधी तथा संक्रमणीय गुण होते हैं। इसमें सुस्पष्ट वातानुलोमक गुण होता है। यह आंत्र की पुरःसरणगति को संदमित करके शिथिलता प्रदान करता हैं। सगंध तेल का इंजेक्शन देने से अंतरंग क्षेत्र में वाहिका विस्फारण उत्पन्न हो जाता है, और परिसंचरण में एक निश्चित उद्दीपन क्रिया उत्पन्न करता हैं। यह जठरांत्र क्षेत्र में अवशोषित होता है, और इसका कुछ अंश वृक्कों की मूत्रल क्रिया द्वारा निकल जाता है। जड़ में कीटनाशी गुण, इसमें निहित सगंध अंश के कारण होता है। कुथ कि जड़ो में रेजिनॉयड, एल्केलॉयड, इनुलिन, अवाष्पशील तेल टैनिन तथा शर्करा के घटक होते हैं। तेल का मुख्य अवयव सेस्क्वीटर्पीन, सेस्क्वीटर्पोन एल्कोहल है। कोस्टुनोलाइड, प्राथमिक से स्कवीटर्पीन लैक्टोन, डिहाइड्रोकोस्टस लैक्टोन, डाइहाइड्रोकोस्टस लैक्टोन, वुटुलिन एप्लोटैक्सीन सेस्क्वीटर्पीनी अम्ल इत्यादि विलेय है।

स्वेर्टिया चिरायता (स्थानीय नामः चिरायता/लटजीरा; कुलः जेंशिएनेसी)— यह एकवर्षीय शाकीय पौधा है। जिसका तना सीधा, शाखान्वित, पत्तियों की लम्बाई 3 - 7 cm होती है। इसके कंटक पशुओं के शरीर तथा मनुष्य के कपड़ों से चिपक जाते हैं। इसमें फूल वर्ष भर लगता रहता है। हिमालयी क्षेत्रों में 1200-3000 m की ऊँचाई वाले स्थान पर प्राप्त होता है। खून की सफाई, मलेरिया बुखार, मूत्र विकार, ज्वर, त्वचा रोग तथा पेट के रोगों में लाभकारी है। साफी नामक टानिक इसी से बनाया जाता है। चिरायता कड़वा टानिक है जिसमें अनेक जैन्थोंस पाये जाते हैं जो तपेदिकरोधी गुण रखते हैं। जैन्थोन-1, 8-डाइहाइड्रॉक्सी-3,5-- डाइमेथॉक्सी जैन्थ्रोन, एमरोजेन्टीन, एमरोस्वरीन, जेन्टियोपिक्रोसाइड, स्वेर्टियामैरीन, सिवरोसाइड, ग्लूकोसाइड (अमरोजेनटिन एवं अमरोस्वीटिन) पेन्टासाइक्लिक ट्राइटर्पीन हेडराजेनिन प्राप्त किया गया है।

वैलेरियाना वालिशाइ द कन्दोल (स्थानीय नामः सुगन्ध वाला (समेवा); कुलः वैलेरिएनेसी)—यह 1500-2000 m की ऊँचाई पर मिलता है। यह बहुवर्षीय, 15 से 50 cm ऊँचा शाकीय पौधा है। इसकी जड़ें काफी मोटी तथा क्षैतिज होती हैं। आधार की पत्तियां अण्डाकार, हृदयाकार, पत्ती के तट पर दाँतों की संरचना, तनों की पत्तियां थोड़ी, बहुत छोटी, वृन्तयुक्त अथवा वृन्तहीन, पुष्प सफेद तथा कोरिम्ब पुष्प क्रम में लगे होते हैं, इस पौधे मे पुष्प तथा फल मार्च से जून माह के बीच आते हैं। यह 2000-3000 m की ऊँचाई पर छाया युक्त ढाल पर, जंगलों के नीचे, मण्डी, शिमला, चम्बा, कुल्लु, कांगड़ा, लाहूल स्पीती में पाया गया है। इसमें वाष्पशील तेल पाया जाता है जिसका प्रयोग आधुनिक, यूनानी तथा आयुर्वेदिक सभी चिकित्सा पद्धतियों में किया जाता है। इसकी जड़ों का उपयोग हिस्टीरिया, न्यूरोसिस आदि रोगों के उपचार में किया जाता है। केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र के डिप्रेशन में, अनिन्द्रा तथा हृदय सम्बन्धी विकारों में आर्युवेद एवं युनानी चिकित्सा में प्रयोग किया जाता है। वैलेरियाना तेल को इत्र उद्योग में इस्तेमाल करते हैं। वेलिपोट्राएटेस रसायन को अवसादक, आकर्षी एवं अर्बूदरोधी के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

व्याख्या एवं निष्कर्ष

हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं में वनौषधियों एवं जड़ी बूटियों का अनुपम भण्डार उपलब्ध है। हिमालय में वनौषधियों एवं अमृत बूटियों की लगभग 1700 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। इनमें से अधिकांश प्रजातियों का उपयोग विभिन्न बीमारियों के इलाज में होता है। युगों-युगों से महामानव ने हिमालय की वन औषधियों एवं अमृत बूटियों का विवरण वेद एवं पुराणों में किया है, जो हमारी सभ्यता से जुड़ा हुआ है। महर्षि वेद व्यास एवं शंकराचार्य ने बद्रीनाथ में बद्रीफल खा करके एवं अलखनंदा का जल ग्रहण करके वर्षों योग में बिताये और बाद में आत्मज्ञान प्राप्त करके महाप्राण बन गये। अमृत बूटी "बद्री बेर" के नाम से ही बद्रीनाथ धाम जाना जाता है। प्राचीन काल से वन औषधियों एवं अमृत बूटियों के मूल, छाल, पत्ती, फल-फूल एवं बीजों के चूर्ण, सत काढ़ा, अवलेह, इत्यादि के रूप मे इस्तेमाल किया जाता है।

हमारे देश में जड़ी बूटी आधारित चिकित्सा, पारम्परिक एवं लोक चिकित्सा का अभिन्न अंग है। रासायनिक दवाओं से शरीर पर पड़ता दुष्प्रभाव, पर्यावरण प्रदूषण एवं नये-नये विषाणु तथा जीवाणु विभेदों के उत्पन्न होने से मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रश्न चिन्ह लग गया है। इन सभी कारणो से मनुष्य स्वास्थ्य के लिए नये आयाम की तलाश कर रहा है और प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ आकर्षित हो रहा है। वर्तमान में न केवल भारत अपितु सम्पूर्ण विश्व में हिमालय की दुर्लभ वानस्पतिक औषधियों का महत्व इनके सरल प्रयोग, व्यापकता एवं प्राणदायिनी क्षमता के कारण निरन्तर शोध एवं ज्ञान -विज्ञान का विषय बना हुआ है। विज्ञान जगत के विकास के साथ- साथ इनके द्वारा विभिन्न प्रकार के रासायनिक अवयवों की जानकारी हो रही है। ये औषधियां साधारण रोग से लेकर जटिल असाध्य एवं शल्य प्रक्रिया तक में अचूक साबित हो रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार आज भी 80 प्रतिशत जनसंख्या परम्परागत चिकित्सा कर विश्वास करती है।

औषधीय पौधों के उपयोग के सम्बन्ध में अधिकतर जानकारी परम्परागत प्रयोगकर्ताओं (हकीम एवं वैद्य) के पास ही है और आधुनिकीकरण के प्रभाव से हम अपने पूर्वजों के अनुसंधान, खोज एवं अनुभव द्वारा प्रदत्त दुर्लभ ओषधीय नुस्खों को भूलते जा रहे हैं। यदि इस

दुर्लभ ज्ञान को संरक्षित नहीं किया गया तो अगली पीढ़ी इस अमूल्य निधि से वंचित रह जायेगी। अतः लोक जीवन से विलुप्त हो रही वनस्पति उपयोगिता के दुर्लभ ज्ञान को संग्रहित एवं संचरित करने की परम आवश्यकता है, और वैज्ञानिक कृषि-विधि, जर्म प्लाज्म संग्रहण तथा ऊतक संवर्धन प्रक्रिया से दुर्लभ वनौषधियों एवं अमृत बूटियों को विलुप्त होने से बचाये जाने की जरूरत है।

सन्दर्भ

1. रोडगरस डब्लू ए एवं पंवार एचएस, प्लानिंग ए वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्टेड एरिया नेटवर्क इन इंडिया, खंड - 1, द रिपोर्ट, वाइल्ड लाइफ इंस्टीटयूट ऑफ इन्डिया, देहरादून 1998.
2. सिंह जे एस एवं सिंह एसपी, ज्ञानोदया प्रकाशन, नैनीताल 1992.
3. एनोनिमस, एक्शन प्लान फार हिमालया, जी. वी. पन्त इंस्टीटयूट ऑफ हिमालयन एनवायर्नमेन्ट एण्ड फॉरेस्ट्स, गवर्नमेन्ट ऑफ इन्डिया, नई दिल्ली 1992.
4. सामन्त एस एस एवं धर यू, *इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ ससटेन डेव एण्ड वर्ल्ड इकोलॉजी,* **4**: (1997), 179-191.
5. धवन बी एन, बायोडायवर्सिटी-ए वैल्यूएबल रिसोर्स फॉर न्यू बायोमॉलीक्यूल्स इन यू. धर (एडिशन) हिमालय बायोडाइवर्सिटीः एक्शन प्लान, ज्ञानोदया प्रकाशन, नैनीताल, (1997), 111-114.
6. सिंह डी के एवं हजरा पी के, फ्लोरिस्टिक डायवर्सिटी, इन गुजराल एडिशन बायोडायर्वसिटी स्टैटस इन द हिमालया, ब्रिटिश काउंसिल, नई दिल्ली (1996), 23-38.
7. चटर्जी डी, *जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल,* **5** (1939), 19-67.
8. जैन एस के, डिक्शनरी ऑफ इंडियन फोल्क मेडीसिन एण्ड इथनोबॉटनी, दीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली (1991).
9. सामन्त एस एस, धर यू एवं पालनी एल एम एस, मेडिसिनल प्लान्ट्स ऑफ इंडियन हिमालयन डायवर्सिटी, डिस्ट्रीब्यूशन पोटेंशियल वैल्यूज, ज्ञानोदया प्रकाशन, नैनीताल (1998).
10. लीयंग ए वाई एवं फोस्टर एस, एनसाइक्लोपीडिया ऑफ कामन नेचुरल इन्ग्रेडिएन्ट्स यूज्ड इन फूड, ड्रग्स एण्ड कास्मेटिक्स, सेकन्ड एडीशन, न्यूयार्क : जान विली एण्ड सन्स एनएस (1996).
11. वेमनेस एल, द कम्पलीट बुक ऑफ हर्ब्स, किनडरस्ले लिमिटेड, लंदन (1994) 304.
12. फुजी वाई, पोडोफिल्लम स्पीसीज : इन विट्रो रिजेनरेशन एण्ड प्रोडक्शन ऑफ पोडोफिलोटाक्सिन्स, इन बजाज, वाई. पी. एस. (एडीशन) बायोटैक्नोलोजी इन एग्रीकल्चर एण्ड फारेस्ट्री, 151 मेडिसिनल एण्ड एरोमैटिक प्लान्ट्स, स्प्रीगंर 111 बरलैग कम्पनी, न्यूयार्क (1991) 362-375.
13. चेवैलियर ए, द एनसाइक्लोपीडिया ऑफ मेडिसिनल प्लान्ट्स, डोरलिंग किनडरस्ले लिमिटेड, लंदन (1996) 336.
14. सिंह एस एवं कुमार एस, *विथानिया सोमनीफेरा* : द इंडियन जिन्सेंग अश्वगंधा, सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ मेडिसिनल एण्ड एरोमैटिक प्लान्टस, इण्डिया, (1998) 293.